

शब्द-ब्रह्म के साधक

अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वं यदक्षरम् ।

विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः ॥

शब्द को ब्रह्म की सत्ता मानने वाले लेखक-संपादक आचार्य बालकृष्ण पाण्डेय ने अपने 96 वर्ष के जीवनकाल के आठ दशकों में जो कुछ लिखा-पढ़ा, वह किसी भी व्यक्ति, परिवार, समाज व राष्ट्र की धाती बन सकता है। उनका साहित्य-सृजन बेशक किसी प्रकाशन, पुरस्कार, उपाधि या पद की तथाकथित उपलब्धियों पर खरा न उतर पाया हो, लेकिन उनके रचना-संसार ने सीमित पाठक वर्ग को अपनी लोकसंस्कृति, ग्रामसंस्कृति, वैयक्तिक लोकाचरण, नई पीढ़ी को एक नई दिशादृष्टि तो दी ही है।

असनी (फतेहपुर) के पंडित शारदा प्रसाद पाण्डेय को कुश्ती-अखाड़े का नशा था। आसपास के जिलों में खासा नाम था। इलाहाबाद की शंकरगढ़ रियासत में पुरस्कार स्वरूप जमीन मिली। वहीं ग्राम परसरा में 9 अक्टूबर 1923 (अश्विन कृष्ण 14 संवत् 1980) में जन्मे आचार्य बालकृष्ण पाण्डेय पांच भाई व दो बहनों में सबसे बड़े थे। प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त कर अपने मामा के पास बंगाली मोहाल, कानपुर आ गए। सेवा सदन माहेश्वरी मोहाल, सीबीएस स्कूल में अध्यापन करने के बाद वर्ष 1952 में ज्ञान भारती एम एस इंटर कॉलेज में सहायक अध्यापक नियुक्त हुए। सीबीएस स्कूल में अध्यापन करते हुए पूर्व प्रधानमंत्री माननीय अटल जी के पिता पंडित कृष्ण बिहारी वाजपेई भी साथ रहे।

आधा दशक अध्यापन कार्य करते हुए शिक्षा व साहित्य को एक धर्म की तरह स्वीकार किया, न कि अर्थोपाजन या सम्मान प्रतिष्ठ को लालसा के लिए।

अपनी लेखन प्रतिभा को उभारने, प्रज्वलित करने, संवारने में वर्ष 1944 में शिक्षाविद् आचार्य कृष्ण विनायक फड़के का सानिध्य मिला। फलतः लेखन का प्रारंभिक काल बाल मनोविज्ञान साहित्य से शुरू हुआ। लाल रामनाथ गुप्त के संपादन में निकलने वाले 'रामराज्य' साप्ताहिक में बालकृष्ण पाण्डेय विशारद के नाम से लेख छपते। 'बाल जगत' पृष्ठ उनके हवाले था। क्रांतिकारी सुरेंद्रनाथ भट्टाचार्य दैनिक प्रताप के संपादक थे। 'प्रताप' में 'बाल मित्र की चिट्ठी' नियमित छपती। बाल-शिक्षा, बलहित विशारद, बाल साहित्य विशारद में मानवती आर्या सहपाठी थीं। शिशु के प्रथम पांच वर्ष, बच्चों को कहानी सुनाना सीखिए, घर से भागने वाले बच्चे, अपराधी बच्चे, किशोर-मन, बच्चों के अधिकार, सड़क के नियम, बाल मनोविज्ञान लेखों की विस्तृत श्रृंखला है। कुठित युवा पीढ़ी आदि लेखों को मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी से पहला पुरस्कार

रोली अवस्थी, नोयडा



मिला। बाल आंदोलन में अग्रणी भूमिका निभाते हुए 'बाल निकेतन' संस्था की स्थापना की। किराई नगर में 'नन्हें-मुत्रों

का स्कूल' चलाया। कानपुर बाल संघ, बाल सेवक बिरादरी से सक्रिय रूप से जुड़े रहे। अशोक मसाले के अधिष्ठाता बाबू भगवती प्रसाद गुप्त, लोकेश्वर नाथ सक्सेना, लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी, नारायण प्रसाद अरोड़ा, उपन्यासकार भगवती प्रसाद वाजपेई, नरेश चंद्र चतुर्वेदी, पाती राम भट्ट, गंगा प्रसाद शास्त्री, पुरुषोत्तम पंडित जी, नरेश चन्द्र सक्सेना 'सैनिक', गोपीनाथ दीक्षित, गुरु प्रसाद अवस्थी से संपर्क रहता। बाल साहित्यकार के रूप में पहचान मिली।

साहित्य के क्षेत्र में रेखाचित्र विधा को पद्धित-पोषित करने में पाण्डेय जी का अग्रिम योगदान रहा। ग्राम्य-जीवन पर आधारित उनके रेखाचित्र त्रिपथगा, उत्तर प्रदेश, समाज कल्याण, कादम्बिनी जैसी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं तथा दैनिक जागरण, स्वतंत्र भारत, आज, नवजीवन आदि समाचार पत्रों के साहित्य पृष्ठ पर नियमित स्थान पाते। लेखकों-साहित्यकारों के सिंडिकेट से अनभिज्ञ, प्रकाशकों की जोड़-तोड़ से अपरिचित पाण्डेय जी का 56 रेखाचित्रों का संग्रह 'धरती के अंकुर' जिसकी भूमिका साहित्यकार-आलोचक लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी ने लिखी थी, अप्रकाशित ही रह गया। ऊधो जी, मां कस्तूरा, बबऊनू नाऊ, कवि जी, ओझाइन अइया, पासिन दाई, बूढ़ी भैंस, सितावा बुआ, रसीले बाबा, बूढ़ा पीपल, जोखई, त्रिफला जी, साधू दादा, पण्डित जी आदि रेखाचित्रों की विस्तृत श्रृंखला है। जिसमें जहां विभिन्न आयुवर्ग, आयवर्ग, व्यवसायवर्ग, रुचिवर्ग के लोकमानस को आधार बना कर तत्कालीन ग्राम्य-संस्कृति का जीवंत खाका है वहीं साथ में 1920-21 का असहयोग आन्दोलन, 1930-31 का सत्याग्रह, दोनों विश्वयुद्धों के घटनाक्रम, 1942 का भारत छोड़ो तथा 1947 आजादी के बिगुल का उद्घोष भी है। पाण्डेय जी का कथा साहित्य शब्दाडंबरों से कोसों दूर है। एक-एक शब्द, एक-एक वाक्य की गरिमा है। संक्षिप्तकरण विशेष शैली है। उर्दू के प्रचलित शब्दों, लोकोक्ति-मुहावरों के साथ-साथ भाषा सरल, सहज, व्यावहारिक और प्रभावपूर्ण है। लेखक रेखाचित्र के माध्यम से परकाया प्रवेश की कला जानते थे। लोग अभावों में रहते हुए भी संतोष का जीवन जिया करते। 'हरि इच्छ बलियसी' में आस्था होती, 'सबके भला में अपना भला' खोजने की प्रवृत्ति रहती, दूसरे के दर्द से स्वयं की आत्मा में टीस उभरती।

शिशु-बाल जीवन, युवा और नारीशक्ति में ही सामाजिक, सांस्कृतिक व नैतिक मूल्यों की संरक्षा, संपोषण देखने वाले पाण्डेय

जी के लेख यथार्थ से आदर्शवाद की यात्रा करते। किशोर-युवाओं में व्याप्त होती कुंठा, तनाव, अवसाद व पालयनवादी दृष्टिकोण को नई राह दिखाते, आशा का संचार करते।

वर्ष 1987 से शुरू हुआ 'कान्यकुब्ज मंच' का प्रकाशन पाण्डेय जी का जीता जागता स्मारक है। घोर आशावादी और सकारात्मक सोच रखने वाला यह पुरुषार्थी जीवन के उत्तरार्ध में 'कान्यकुब्ज मंच' को एक मिशन की तरह चलाने के लिए संकल्पित हुआ। नौघड़ व जनरल गंज से अखबारी कागजों के बंडल कंधों पर लादे प्रेस तक पहुंचाने, ठंड हो या बरसात खुले बरामदे में सुबह पांच बजे से रात दस-ग्यारह बजे तक किताब-नोटबुकों के बीच कलम चलाते, झोले में प्रकाशित नए अंक की प्रतियां डाले मुहल्ले, से लेकर शहर-गांव, प्रांत व तीर्थों को अपनी ग्यारह नंबर की गाड़ी से नापते किसने नहीं देखा? सम्पादक के दायित्वों, संकल्पों व अधिकारों के कर्तव्यबोध के साथ तीन दशकों तक सक्रियता के साथ सम्पादन-प्रकाशन कर पत्रिका को लोक स्वीकृत बनाया। मंच का प्रकाशन उनके उत्तरजीवियों द्वारा आज भी हो रहा है, मगर इस बात को कहने में संकोच नहीं, कि पाण्डेय जी के देहत्याग (10 जनवरी, 2019) के साथ ही उनकी आत्मा पत्रिका की विषय सामग्री से विलुप्त होती जा रही है।

शब्द-ब्रह्म की मर्यादा के रक्षक इस हिन्दी साहित्यकार की रचनाओं का सही मूल्यांकन नहीं हो सका। परन्तु उनके हितैषी, उत्तराधिकारी या साहित्यप्रेमी उनके रचना संसार को पुनर्जीवित कर सकें तो यह व्यक्ति, परिवार, समाज, संस्कृति और राष्ट्र के लिए अमूल्य निधि साबित हो सकता है। □

(लेखिका पाण्डेय जी की पौत्री हैं।)

हम इतने संवेदन शून्य क्यों होते जा रहे हैं हमारे रंग-रंग में जड़ता व्याप्त है, शिथिल युवा भी अपने प्रश्नों के हल करने तथा अपने समाज के सुधार से विरक्त हैं।

रहा ब्राह्मणों का संगठन, वह मेढ़कों को तौलने से कम दुष्कर कार्य नहीं है। इसमें आड़े आता है 'अपनी इफली और अपना राग' और सबसे अधिक व्यक्तिगत 'अहम्' जो किसी का नेतृत्व स्वीकार करने में अपनी हेटी मानता है। कुछ ऐसे भी सज्जन हैं जो खुद पहल करने नहीं, पर दूसरों की टांग खींचने में पीछे न रहेंगे।

संयोग से किसी ने अपने 'अहम्' को वश में कर भी लिया और दूसरों की पहल के प्रति उपेक्षा नहीं की तो भी वे उदासीनता अवश्य वरतते हैं।

आपस में कुछ मनमोद हों तो व्यक्तिगत आरोप-प्रत्यारोप से बचकर उन पर खूल कर लेकिन शालीन ढंग से बहस हो और उसके आधार पर सही निर्णय हो। हमें यह भी देखना है कि मानव मूल्य की दृष्टि से आज हम केवल सामन्ती मानसिकता के बोधक बनकर कहीं न रह जाय। हम अपनी बातों को अभिनयकारी और फैशन परस्त भी नहीं रखना चाहते। आज हमें इतिहास विरोधी, मूल्य विरोधी नहीं। बल्कि इतिहास के संदर्भ से मूल्यान्वेषण की सतत प्रक्रिया से अर्जित मानसिकता की आवश्यकता है।

बुद्धिजीवियों से निवेदन है कि वे समाज की ज्वलन्त समस्याओं पर सोचने विचारने और दिशा निर्देश का दायित्व निभाने में पीछे न रहें। पत्रिका अपने ब्राह्मण समाज से जुड़ाव का एक मात्र स्रोत है, उसकी पक्ति-पक्ति सोदश्य, सार्थक तथा विचारेतेजक हो, पाठक इसी कसौटी पर अंक को परखें तो हमें सन्तोष होगा। इसके प्रकाशन में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जिन महानुभावों का सहयोग रहा है उन सबके प्रति हम हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

यदि आप समझते हैं कि 'कान्यकुब्ज मंच' जीवन के मानवीय गुणों को पुनर्स्थापित करने तथा समाज में व्याप्त जड़ता में हरकत पैदा करने सरीखा कुछ कार्य कर रही है तो उसे आपका सच्चा सहयोग मिलना ही चाहिए आप पत्रिका से जो अपेक्षा करते हैं, उन विचारों से हमें अवगत कराइये। □

मल्लिकार्जुन पाण्डे

दिसम्बर 1990 अंक का सम्पादकीय